भगवान् शिव के माहात्म्य संबंधी प्रकीर्ण सन्दर्भ

हिन्दु धार्मिक साहित्य शिव के माहात्म्य से भरे पड़े हैं। उन सभी में निहित सभी सन्दर्भों को एकत्र कर पाना तथा उसे एक ही पुस्तक में लिखना न तो संभव है और न ही वे आम पाठकों के लिये आवश्यक हैं। वेद, उपनिषद्, महापुराणों तथा कुछ महत्वपूर्ण उपपुराणों, महाभारत, प्रमुख रामायणों तथा शिवोक्त प्रमुख गीताओं में शिवतत्त्व संबंधी पाये जानेवाले विचारों की चर्चा के बाद इस अध्याय में हम शिव-महात्म्य संबंधी कुछ प्रकीर्ण संदर्भों की चर्चा करेंगे ताकि पाठक को शिव-महात्म्य संबंधी साहित्य के विस्तार का कुछ ज्यादा ज्ञान हो सके।

समस्त तंत्र ग्रन्थों में शिव की महिमा भरी पड़ी है। हम यहाँ एकाध उदाहरण प्रस्तुत करेंगे। 'कुलार्णव तन्त्र' में शिव को परब्रह्म, निष्कल, सर्वज्ञ, सब कुछ करनेवाला, सबका स्वामी, निर्मल आश्रयस्थान, ज्योतिस्वरूप, अनादि, अनन्त, निर्विकार, परात्पर, निर्गुण तथा सच्चिदानन्द कहा गया है। उसी शिव का अंश जीव कहा गया है।

अस्ति देवी परब्रह्मस्वरूपी निष्कलः शिवः।
सर्वज्ञः सर्वकर्ता च सर्वेशो निर्मलाशयः।।
अयं ज्योतिरनाद्यन्तो निर्विकारः परात्परः।
निर्गुणः सच्चिदानन्दस्तदंशा जीवसंज्ञकाः। (कुलार्णव तंत्र 1/11-12)

'महानिर्वाण तन्त्र' में एक स्थल पर भगवान् शिव कहते हैं कि सभी वेद, पुराण, स्मृति तथा संहिता में मेरा ही प्रतिपादन किया गया है, मेरे अतिरिक्त जगत् का अन्य कोई स्वामी नहीं है।

सर्वैर्वेदैः पुराणैश्च स्मृतिभिः संहितादिभिः।
प्रतिपाद्योऽस्मि नान्योऽस्ति प्रभुर्जगति मां विना।। (महानिर्वाण तन्त्र, उल्लास 2/10)

'उत्पत्ति तंत्र' में कहा गया है कि बिना शिवार्चन के चाहे शाक्त हो, वैष्णव हो, सौर हो या गाणपत्य हो, सिद्धि नहीं प्राप्त हो सकती।

शाक्तो वा वैष्णवो वापि सौरो वा गाणपोऽथवा।
शिवार्चनविहीनस्य कुतः सिद्धिर्भवेत् प्रिये।।

(उत्पत्ति तंत्र, कल्याण, शिवोपासना अंक पृ. 184 से उद्घृत)

शिव संहिता मूलतः योग का ग्रन्थ है, जिसमें शिव-पार्वतीसंवाद के रूप में योग के तत्त्वों का निरूपण है। इस ग्रन्थ में कहा गया है कि आत्मस्थ अर्थात् आत्मा में स्थित भगवान् शिव को छोड़कर जो उनकी पूजा बाहर करता है वह मानो हाथ पर रक्खी वस्तु को छोड़कर, उसे भ्रमित हो अन्यत्र ढूढ़ता है(भाव यह है कि आत्मा जो शिव का अंश है उसी में शिव की भावना कर उसमें ध्यान लगाना, उसकी पूजा करना बेहतर है अपेक्षाकृत उस पूजा के जो मन से बाहर स्थूलरूप से की जाती है। परन्तु जो लोग ध्यान नहीं लगा पाते उनके लिये बाह्यपूजा का भी कुछ मूल्य होता ही है।)

आत्म संस्थं शिवंत्यक्त्वा बहिःस्थं यः समर्चयेत्।
हस्तस्थं पिण्डमुत्सृज्य भ्रमते जीविताशया।। (शिव संहिता 5/7)

आत्मलिंग की पूजा का महत्त्व बताते हुए कहा गया है कि आलस्यरहित हो आत्मलिंग की पूजा प्रतिदिन करने से निःसंदेहरूप से सभी सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं।

आत्मलिंगार्चनं कुर्यादनालस्यं दिने दिने।
तस्य स्यात्सकला सिद्धिर्नात्र कार्या विचारणा।। (शिव संहिता 5/72)

आगे कहा गया है कि त्रिपुरासुर को समाप्त करनेवाले एकमात्र शिव ही जगत् के परमकारण हैं, उनका पद अक्षय है तथा वे शान्त, अप्रेमय एवं अनामय हैं। उनसे निःसन्देहरूप से सभी कामनाओं की प्राप्ति हो जाती है।

त्रिपुरे त्रिपुरन्त्वेकं शिवं परम कारणम्।
अक्षयं तत्पदं शान्तमप्रमेयमनामयम्।
लभतेऽसौ न सन्देहो धीमान्सर्वमभीप्सितम्।। (शिव संहिता 5/205)

'गोरक्ष संहिता' योग का एक अन्य ग्रन्थ है जो गोरखनाथजी द्वारा रचित माना जाता है। गोरक्षनाथ के गुरु मत्स्येन्द्रनाथ हठयोग के आचार्य माने जाते हैं। गोरक्षनाथ ने इन्हीं के मुख से भगवान् श्रीआदिनाथ शिवजी के मुखारविन्द से प्रकट हुए योग-विषयक उपदेशों का ज्ञान प्राप्त करके मुमुक्ष जनों के उपयोगार्थ उनमें से दो सौ श्रेष्ठ एवं हितकर श्लोकों को छाँट कर सार रूप में 'गोरक्ष संहिता' के नाम से ग्रन्थ का रूप दिया। आदिनाथ शिव द्वारा ही नाथ सम्प्रदाय का प्रारंभ हुआ और मत्स्य देहधारी मत्स्येन्द्रनाथ शिव द्वारा पार्वती के प्रति कहे उपदेशों को सुनकर परम सिद्ध एवं योगी बन गये। मत्स्येनद्रनाथ के बाद उनके शिष्य गोरक्षनाथ भी योग के आचार्य हुए। हम यहाँ पर गोरक्ष संहिता से कुछ ऐसे उद्धरण प्रस्तुत करेंगे जो शिव की महिमा के सूचक हों।

हम जानते हैं कि योग के आठ अंग हैं जिसमें 'धारणा' छठे स्थान पर आती है। योगी क्रमशः पाँचों तत्त्वों की धारणा करता हुआ आगे बढ़ता जाता है। पाँचवें तत्त्व आकाश की धारणा के संबंध में कहा गया है कि- स्वच्छ जल के समान वर्ण तथा ब्रह्मरन्ध्र में स्थित, वर्तुलाकार, 'हकार' बीजयुक्त आकाश तत्त्व का अधिष्ठाता देव सदाशिव के सहित चिन्तन करे और मन-प्राण सहित स्वयं भी उसी में लीन हो जाय तो पाँच घटी बीतते-बीतते यह नभोधारणा (आकाश की धारणा) सिद्ध हो जाती है। इसके प्रभाव से मोक्ष के बन्द कपाट खुल जाते हैं, अर्थात् साधक को मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

आकाशं सुविशुद्धवारिसदृशं यद्ब्रह्मरन्ध्रस्थितं
तस्मादेन सदाशिवेन सहितं तत्त्वं हकारान्वितम्।
प्राणं तत्र विलीय पंचघटिकं चित्तान्वितं धारये-

देषा मोक्षकपाट पाटन पटुः प्रोक्ता नमोधारणा ।।

(गोरक्ष संहिता-द्वितीय शतक/58)

आगे कहा गया है कि भौहों के मध्य में नीलाभ परमेश्वर शिव का नित्य ध्यान करते हुए योगी प्राण को जीतकर जीव-ब्रह्म की एकता स्थापित करता है अर्थात् मोक्ष को प्राप्त करता है। नासिका के अग्रभाग में निर्गुण, शान्त, विश्वतोमुख, आकाश के समान व्यापक शिव का ध्यान करनेवाला योगी स्वयं भी एकाकी ब्रह्ममय हो जाता है।

ध्यायन्नीलनिभं नित्यं भ्रूमध्ये परमेश्वरम् ।
आत्मानं विजितप्राणो योगीमोक्षमवाप्नुयात् ।।
निर्गुणं च शिवं शान्तं गगने विश्वतोमुखम्।
नासाग्रदृष्टरेकाकी ध्यात्वा ब्रह्ममयो भवेत्।।(गोरक्ष संहिता-द्वितीय शतक/71-72)

जहाँ नाद का प्राकट्य होता है, वह आकाश मन का स्थान है, उसी को आज्ञा चक्र कहते हैं। वहीं आत्मा में शिवजी का ध्यान करके योगी मोक्ष को प्राप्त होता है। वहाँपर निर्मल, व्योमाकार, मरीचि जल के समान एवं सर्वव्यापक आत्मा(रूप शिव) का ध्यान करके योगी मोक्ष को प्राप्त होता है।

आकाशे यत्र शब्दः स्यात्तदाज्ञाचक्रमुच्यते।
तत्रात्मानं शिवं ध्यात्वा योगी मुक्तिमवाप्नुयात्।।
निर्मलं गगनाकारं मरीचिजलसन्निभम्।
आत्मानं सर्वगं ध्यात्वा योगीमुक्तिमवाप्नुयात् ।। (गोर. सं. 2/73-74)

इसके आगे कहा गया है कि गुदा, नाभि आदि नौ स्थान ध्यान के योग्य माने गये हैं। इन स्थानों में तेजोमय, ब्रह्मात्मक, श्रेष्ठ ज्योतिस्वरूप शिव का ध्यान करके और उन्हें जानकर योगी मुक्त हो जाता है-यह गोरक्षनाथ का कथन है।

एषु ब्रह्मात्मकं तेजः शिवज्योतिरुत्तमम्।
ध्यात्वां ज्ञात्वा विमुक्तः स्यादिति गोरक्षभाषितम्। (गो. सं 2/77)

नाथ परम्परा के अन्य ग्रन्थों में शिव को परमकारण, परमेश्वर, परात्पर, स्वयंभू, सर्वतोमुख तथा सभी का कारक कहा है। इतना होते हुए भी शक्ति के बिना शिव कुछ भी नहीं कर सकते। अपनी शक्ति के सहारे से ही(अथवा उससे संयुक्त होकर) सम्पूर्ण जगत् के रूप में भासते अथवा व्यक्त होते हैं।

अतएव परमकारणं परमेश्वरः परात्परः शिवः स्वस्वरूपतया सर्वतोमुखः सर्वाकारतया स्फुरितुं शक्नोतीत्यतः शक्तिमान् शिवोऽपि शक्तिरहितः शक्तः कर्तुं न किंचन। स्वशक्त्या सहितः सोऽपि सर्वस्याभासको भवेत्। (सिद्धसिद्धान्तपद्धति 4/13)

शिवशक्ति का संयोग ही परम स्थिति है।

शिवशक्तिसमायोगाज्जायते परमा स्थितिः। (योगबीज - 129)

एक अन्य नाथग्रन्थ में कहा गया है कि 'जिनकी बायीं ओर निर्गुण - स्वरूप (ब्रह्म) और दाहिनी ओर अद्‌भुत निजाशक्ति - इच्छाशक्ति (परमेश्वरी पराम्बा महामाया) विराजमान हैं और बीच में जो स्वयं पूर्ण अखण्ड (परमशिव) सर्वाधार द्वन्द्वातीत (अलखनिरंजन द्वैताद्वैत विवर्जित स्वरूप) विद्यमान हैं, उन श्रीनाथ (आदि ब्रह्म, आदिनाथ परमेश्वर) को नमस्कार है।

निर्गुणं वामभागे च सव्यभागेऽद्‌भुता निजा।
मध्यभागे स्वयं पूर्णस्तस्मै नाथायते नमः।। (गोरक्षसिद्धान्त संग्रह - 1)

'हठयोग प्रदीपिका' के रचयिता ने नादविन्दुकलात्मा शिवस्वरूप गुरु, जिनकी उपासना से योगी निरंजन - पद प्राप्त करता है, को नमस्कार किया है। अर्थात् शिव को योग का गुरु तथा योगी के ध्यान का विषय दोनों माना गया है।

नमः शिवाय गुरवे नादविन्दुकलात्मने ।
निरंजनपदं याति नित्यं यत्र परायणः।। (हठयोगप्रदीपिका 4/1)

'ईशान संहिता' में शिवरात्रि व्रत के बारे में कहा गया है कि यह चाण्डालपर्यन्त सभी मनुष्य के पाप नष्टकर भुक्ति एवं मुक्ति प्रदान करनेवाला है।

शिवरात्रि व्रतं नाम सर्वपापप्रणाशनम्।
आचाण्डालमनुष्याणां भुक्तिमुक्तिप्रदायकम्।।

(ईशान संहिता, कल्याण, शिवांक पृ. 420 से उद्‌धृत)

'शिवस्वरोदय' में भगवान् शिव को निरञ्जन, निराकार तथा अद्वैतस्वरूप बताया गया है। उसी से समग्र चराचर जगत् की सृष्टि होती है।

निरञ्जनो निराकार एको देवो महेश्वरः। (शिवस्वरोदय श्लोक 6)

'तत्व प्रकाश' में कहा गया है कि स्वाभाविक ज्ञान एवं क्रियाशक्ति से सम्पन्न शिव जगत् के आचार्य हैं। भावार्थ यह है कि भगवान् शिव स्वयं ज्ञानस्वरूप हैं परन्तु वे क्रियाशक्ति से भी सम्पन्न हैं। दूसरे शब्दों में माया, जो उनकी क्रियाशक्ति है, से वे सदैव युक्त रहते हैं। ज्ञानस्वरूप होने के कारण उन्हें सभी विद्याओं का आचार्य तथा विद्याओं का अधिपति माना गया है।

ज्ञानक्रियास्वभावं शिवतत्त्वं जगदुराचार्याः।

(तत्वप्रकाश, कल्याण शिवांक पृ. 169 से उद्‌धृत)

'शैव सिद्धान्त सार' में शिव के त्रिशूलधारी, चिताभस्मलेपी और रुण्ड - मुण्डधारी होने की आध्यात्मिक व्याख्या की गयी है। उदाहरण के लिये - वह पापियों को आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक शूल या पीड़ा देता है, इसी से वह त्रिशूलधारी है। लोहे के त्रिशूल से कोई प्रयोजन नहीं -

शूल त्रयं संवितरन् दुरात्मने
त्रिशूलधारिन् नियमेन शोभसे।।

(शैवसिद्धान्तसार, कल्याण, शिवांक पृ. 153 से उद्घृत)

प्रलयकाल में उनके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं रहता। ब्रह्माण्ड श्मशान हो जाता है, उसकी भस्म और रुण्ड-मुण्ड में वही व्यापक होता है, अतएव 'चिताभस्मलेपी' और 'रुण्ड-मुण्डधारी' कहलाता है न कि वह अघोरियों के समान चिता-निवासी है।

कल्पान्तकाले प्रलुठत्कपाले समग्रलोके विपुलश्मशाने।
त्वमेकदेवोऽसि तदावशिष्टश्चित्ताश्रयो भूतिधरः कपाली।।

(शैवसिद्धान्तसार, वही पृ. 153)

भृंगीश अथवा श्रीसंहिता के अन्तर्गत शिवरात्रि माहात्म्य की चर्चा करते समय भगवान् शिव के गुणों का गान किया गया है।

श्रीनारदजी ने पांचरात्र ग्रन्थ में(जो श्रीरामनुजाचार्य के श्रीवैष्णव सम्प्रदाय का खास साम्प्रदायिक ग्रन्थ है) स्पष्टरूप से आज्ञा दी है कि जिस ग्राम या शहर के मुहल्ले में भगवान् श्रीशंकर का मंदिर न हो वहाँ कोई वैष्णव आपद्धर्म में भी एक रात के लिये भी वास न करे।(कल्याण, शिवांक, पृ. 20)

'कौषीतकि ब्राह्मण' में रुद्रदेव को सर्वश्रेष्ठ देवता घोषित किया गया है।

रुद्रो वै ज्येष्ठश्च श्रेष्ठश्च देवानाम्। (कौषी. ब्रा. 25/13)

भावार्थ यह है कि रुद्रदेव सभी देवताओं से ज्येष्ठ, अर्थात् सभी देवताओं से भी पहले जो अस्तित्व रखता है, एवं श्रेष्ठ हैं। श्रेष्ठ का अर्थ औरों से पूज्य होना है। अतः भगवान् शिव श्रेष्ठ होने के कारण अन्य सभी देवों द्वारा पूज्य भी हैं।

गर्गसंहिता में एक स्थल पर भगवान् श्रीकृष्ण शंकरजी से कहते हैं कि 'तुम मेरे हृदय में हो और मैं तुम्हारे हृदय में। हम दोनों में कोई अन्तर नहीं है। खोटी बुद्धिवाले मूढ़ पुरुष ही हम दोनों में अन्तर या भेद देखते हैं। सदाशिव! मेरे भक्त तुमको नमस्कार करते हैं और तुम्हारे भक्त मुझको। जो मेरी इस बात को(कि हमारे तुम्हारे बीच कोई भेद नहीं है, इस कारण से हम दोनों के भक्तों को हम दोनों को ही प्रणाम करना चाहिये) नहीं मानते हैं, वे घोर नरक में पड़ेंगे।

ममासि हृदये त्वं तु भवतो हृदये ह्यहम्।
आवयोरन्तरं नास्ति मूढाः पश्यन्ति दुर्धियः।।
त्वां नमन्ति च मद्भक्तास्त्वद्भक्ता मां सदाशिव।
ये न मन्यन्ति मद्वाक्यं यास्यन्ति नरकं च ते।।

(गर्गसंहिता, अश्वमेधखण्ड 39/23-24)

'श्रीहरिभक्तिविलास' के नामापराध-प्रकरण में लिखा है कि जो मनुष्य शिव एवं विष्णु के

गुण तथा नाम आदि में भेद बुद्धि रखता है अर्थात् उनको हर दृष्टि से समान नहीं समझता, वह हरिनाम का अपराधी है।

शिवस्य श्रीविष्णोर्य इह गुणनामादि सकलं।
धिया भिन्नं पश्येत्स खलु हरिनामाहितकरः।।

(श्रीहरिभक्तिविलास, कल्याण, शिवांक, पृ0 175 से उद्धृत)

उपरोक्त ग्रन्थ के शिवरात्रि व्रत के प्रसंग में शिवमहिमापरक और भी कुछ वचन श्रीभगवान् की उक्ति के रूप में उद्धृत किये गये हैं। यथा–

परात्परतरं यान्ति नारायणपरायणाः।
न ते तत्र गमिष्यन्ति ये द्विषन्ति महेश्वरम्।।
यो मां समर्चयेन्नित्यमेकान्तं भावमाश्रितः।
विनिन्दन् देवमीशानं स याति नरकायुतम्।।
मद्भक्तः शङ्करद्वेषी मद्द्वेषी शङ्कर प्रियः।
उभौ तौ नरकं यातो यावच्चन्द्रदिवाकरौ।।

(श्रीहरिभक्तिविलास, कल्याण, शिवांक, पृ0 176 से उद्धृत)

अर्थात्–नारायणभक्त परमधाम को जाता है, परन्तु अगर वह महादेवजी से द्वेष करता है तो वहाँ नहीं जायगा। (श्रीहरि कहते हैं कि)जो भक्तिभाव से मेरी एकान्तिक पूजा करता है और वह शिवजी की निन्दा करता है तो वह दस हजार वर्षोंतक नरक यातना भोगेगा। जो मेरा भक्त होकर शंकरजी की निन्दा करता है या शंकरजी का भक्त होकर मेरी निन्दा करता है वे दोनों ही सूर्य–चन्द्र के बने रहनेतक नरक की यातना भोगेंगे।

भगवान् शिव की भक्ति के माहात्म्यपरक वचन शिव रहस्य में इस प्रकार से हैं। महादेवजी की अर्चना में प्रीति उत्पन्न होना अत्यन्त दुर्लभ है। अगर किसी को यह सुलभ हो गयी है तो उसे मुक्त ही समझना चाहिये। भगवान् शिव को सर्वश्रेष्ठ देव मानकर यत्नपूर्वक पूजने से उसे मुक्ति दुर्लभ नहीं होती। अगर अभिचार के लिये भी नित्य शिव की अर्चना की जाय तो वे मुक्ति एवं भुक्ति दोनों प्रदान करते हैं–इसमें कोई सशंय नहीं है।

महादेवार्चने प्रीतिर्नृणामत्यन्तदुर्लभा।
सुलभा यदि सा न्ऋणां तदा मुक्ता हि ते नराः।।
यदि देवोत्तमत्वेन ज्ञात्वा देवोत्तमं शिवम्।
समर्चयति यत्नेन तदा मुक्तिर्न दुर्लभा।।
एवमप्यभिचारेण नित्यमभ्यर्चितः शिवः।
ददाति भुक्तिं मुक्तिञ्च सत्यं सत्यं न संशयः।।

(शिवरहस्य, कल्याण, शिवांक, पृ. 480 से उद्घृत)

पराशर पुराण के निम्नलिखित वचनों से यह विदित होता है कि श्रुतियों, स्मृतियों एवं पुराणों में जहाँ कहीं अन्यान्य देवताओं को जगत् का कारण बतलाया गया है–उसका पर्यवसान शंकरजी में ही है। उसमें साफ कहा गया है कि साम्बशिव ही सबके कारण हैं। सत्य, ज्ञान और अनन्त वही हैं। ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र आदि उन्हीं के अधीन हैं, उनकी आज्ञा तथा कृपा बिना कुछ नहीं कर सकते।

सर्वकारणमीशानः साम्बः सत्यादिलक्षणः।
न विष्णुर्न विरञ्चिश्च न रुद्रो नापरः पुमान्।।
श्रतुयश्च पुराणानि भारतादीनि सत्तम।
शिवमेव सदा साम्बं हृदि कृत्वा ब्रुवन्ति हि।।

(पराशर पुराण, कल्याण, शिवांक पृ. 75 से उद्घृत)

नीलमत पुराण एक कश्मीरी ग्रन्थ है। इस पुराण में एक स्थलपर स्पष्टरूप से भगवान् शिव को परमतत्त्व अथवा ब्रह्म या सर्वोच्च सत्ता स्वीकार किया गया है। इसमें अन्यत्र बताया गया है कि जब ब्रह्मा ने शिव का अभिवादन किया तो इन्द्र आश्चर्य में पड़ गये और सोचने लगे कि आखिर ब्रह्मा से भी बड़ा देवता कौन हो सकता है? अपनी इस जिज्ञासा को वे ब्रह्मा के सामने रखते हैं तो ब्रह्माजी जवाब में कहते हैं कि ये महेश्वर शिव हैं जो सर्वेश्वर, कारणों के कारण, अचिन्त्य महिमावाले, सनातन ब्रह्म हैं वे ही सबके कर्त्ता एवं सर्वज्ञ हैं, इनकी इच्छा के अनुसार ही जगत् के सभी चराचर प्राणी वर्तते हैं। ब्रह्मा से इन्द्र प्रश्न करते हैं–

सर्वमेतत् त्वमेवैकः त्वत्तः किम परं विभो।
यन्नतोऽसि महाभाग एतान् में संशयो महान्।। (नीलमत पुराण 1087)

ब्रह्माजी उत्तर देते हैं कि–

एष सर्वेश्वरः शक्र एषः कारणकारणम्।
एष चाचिन्त्यमहिमा एष ब्रह्म सनातन।।
स एष सर्वकर्त्ता च सर्वज्ञश्च महेश्वरः।
यदिच्छया जगदिति बर्वर्ति सचराचरम्।।

साम्ब पुराण में शिव को परमात्मा(55/144) और सभी देवों को शिवात्मक(68/49) कहा गया है। इसी प्रकार शिव को सर्वोत्तम बीज(अर्थात् परम कारण) तथा सर्वोत्तम देवता माना गया है। एक स्थल(80/10) पर कहा गया है कि योगी अविनाशी सर्वोच्च देव शिव को प्राप्त कर संसार के आवागमन से मुक्त हो जाता है।

भगवान् शिव की भक्ति से लोगों को भोग एवं मोक्ष आदि की प्राप्ति होती है। इसीलिये योगी हो या सामान्य मनुष्य अथवा अवतारी पुरुष सभी भगवान् शिव की उपासना करते रहे हैं। साम्ब पुराण(80/10) में कहा गया है कि योगी शिव को प्राप्त कर मुक्त हो जाते हैं।

भगवान् शिव की उपासना में लिंगपूजा का बहुत महत्त्व है। साम्ब पुराण में (अध्याय 55 के श्लोक 98 से लेकर सम्पूर्ण अध्याय 83 तक) शिव एवं उनके लिंग का अनेकों स्थल पर उल्लेख हुआ है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि इस पुराण में भी लिंगपूजा की स्वीकृति है।

एकमात्र परब्रह्म भगवान् शिव ही सगुणरूप धारण कर अन्य सभी देवों का रूप धारण करते हैं। साम्ब पुराण (68/49) में सभी देवों को शिवात्मक कहा गया है। तात्पर्य यह कि भगवन् शिव सर्वदेवात्मक हैं, वे ही सभी देवों का रूप (अलग-अलग कार्यों के लिये) धारण करते हैं। ब्रह्मा होकर वे सृष्टि करते, विष्णु होकर वे पालन करते तथा रुद्र बनकर सबका संहार करते हैं। अत: तीनों ही प्रमुख देवता तात्त्विक दृष्टि से एक ही हैं अन्तर केवल उनके गुण एवं कार्यों में है।

गुरुनानकदेवजी के पुत्र तथा उदासीन सम्प्रदाय के जनक श्रीचन्दजी भगवान् शिव की महिमा का बखान करते हुए कहते हैं कि 'उनके सामने 33 सो देव हाथ जोड़कर खड़े रहते हैं।' ऐसे देव से वे प्रार्थना करते हैं कि वे उनके मन में निवास करें।

श्रीचन्द गंगाधर गुन गावै, हंसा देह सुदरसन पावै।

.....

वामै गोद हँसात भवानी, सुर तैंतिस जोरे थित पानी।
माँगहुँ यहु बरु दुहँ कर जोरे, परम हंसु रहु मानस मोरे।।

(श्रीचन्द-शब्द-सुधा, पद सं. 3)

सूरदासजी कृष्णभक्त के रूप में प्रसिद्ध हैं। परन्तु वे भगवान् शिव तथा श्रीकृष्ण की अभिन्नता स्थापित करते हुए एक ही पद में दोनों की महिमा का समानान्तर-रूप में गान करते हैं। उनकी दृष्टि में भगवान् शिव तथा श्रीकृष्ण नाम-रूप-गुण में समान हैं। भक्तों ने अपनी भावना के अनुरूप दोनों के भिन्न-स्वरूप की अवतारणा कर ली है-

हरि-हर संकर, नमो नमो।
अहिसायी, अहि-अंग-विभूषन, अमित-दान, बल-विष-हारी।

.....

अज-अनीह-अविरुद्ध-एकरस, यहै अधिक ये अवतारी।
सूरदास सम, रूप-नाम-गुन अंतर अनुचर-अनुसारी।।

(सूरसागर, पद सं. 789)

भक्तिस्वरूपा मीराबाई ने स्वयं को सर्वतोभावेन भगवान् कृष्ण के प्रति समर्पित कर दिया था तथापि उनके कुछ पदों में शिव के दर्शन के प्रति भी भावाकुलता के दर्शन होते हैं। ऐसा शायद इसी लिये है कि मीरा की दृष्टि में भी शिव एवं कृष्ण में कोई अंतर नहीं है।

म्हारे घर रमतो जोगिया तू आव।

कानाँ बिच कुण्डल, गले बिच सेली, अंग भभूत रमाय।।
तुम देख्याँ बिण कल न परत है, ग्रिह अंगणो न सुहाय।
मीराँ के प्रभु हरि अबिनासी, दरसन द्यौ ण मोकूँ आय।।

(मीराँ-पदावली, पद सं. 98)

S S S S S S S S

अहिंसा की प्रशंसा तथा मांसाहार की निन्दा

यो जन्तूनात्मपुष्ट्मर्थं हिनस्ति ज्ञानदुर्बलः।
दुराचारस्य तस्येह नामुत्रापि सुखं क्वचित्।।
भोक्तानुमन्ता संस्कर्ता क्रयिविक्रयिहिंसकाः।
उपहर्ता घातयिता हिंसकाश्चाष्टधा स्मृताः।।

(स्कन्द पुराण काशीख. पू. 40/21-22)

जो अज्ञानी अपने शरीर की पुष्टि के लिये दूसरे जीवों की हत्या करता है, उस दुराचारी को न तो इस लोक में सुख मिलता है और न परलोक में ही। जो मांस खाता है, जो जीवों को मारने की अनुमति देता है, जो मांस पकाता है, जो उसको खरीदता है और जो बेचता है, जो अपने हाथों से मारता है, जो बांटता-परोसता तथा जो आज्ञा देकर जीवहिंसा कराता है-ये आठ प्रकार के मनुष्य हिंसक माने गये है।

प्रत्यब्दमश्वमेधेन शतं वर्षाणियो यजेत्।
अमांसभक्षको यश्च तयोरन्त्यो विशिष्यते।।

(स्कन्द पुराण काशीख. पू. 40/23)

जो सौ वर्षोंतक प्रत्येक वर्ष में अश्वमेध यज्ञ द्वारा यजन करता है तथा जो मांस-भक्षण नहीं करता है, इन दोनों की परस्पर तुलना की जाय, तो मांस का त्याग करनेवाला ही श्रेष्ठ सिद्ध होता है।

धर्ममूलमहिंसा च मनसा तां च चिन्तयन्।
कर्णमा च तथा वाचा तत एतां समाचरेत्।।

(संक्षिप्त स्कन्द पुराण, गीताप्रेस, ब्राह्मख. चातुर्मा. माहा. 2/19 पृ. 489 से उद्धृत)

अहिंसा धर्म का मूल है, इसलिये उस अहिंसा को मन, वाणी और क्रिया के द्वारा आचरण में लाना चाहिये।